International Journal of Advances in Engineering and Management (IJAEM)
Volume 4, Issue 10 Oct. 2022, pp: 1197-1200 www.ijaem.net ISSN: 2395-5252

प्राचीन भारत में विज्ञान का इतिहास

Anshul Rani D/o Rajesh Kumar
Dept. of History
Ward No. 12, V.P.O. Narnaund, (Hisar) Hr.

Date of Submission: 15-10-2022 Date of Acceptance: 31-10-2022

भारत में विज्ञान का उद्भव ईसा से 3000 वर्ष पूर्व हुआ है। हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो की खुदाई से प्राप्त सिंधु घाटी के प्रमाणों से वहाँ के निवासियों की वैज्ञानिक दृष्टि तथा वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोगों का पता चलता है। प्राचीन काल में चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में चरक और सुश्रुत, खगोल विज्ञान व गणित के क्षेत्र में आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त और आर्यभट्ट द्वितीय और रसायन विज्ञान में नागार्जुन की खोजों का बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। इनकी खोजों का प्रयोग आज भी किसी–न–किसी रूप में हो रहा है।

भारतीय विज्ञान : विकास के विभिन्न चरण तथा उपलब्धियाँः– भारतीय विज्ञान का विकास प्राचीन समय में ही हो गया था।भारतीय विज्ञान की परंपरा दुनिया की प्राचीनतम परंपरा है, तो अतिशयोक्ति न होगी। जिस समय यूरोप में घुमक्कड़ जातियाँ अभी अपनी बस्तियाँ बसाना सीख रही थीं, उस समय भारत में सिंध घाटी के लोग सुनियोजित ढंग से नगर बसा कर रहने लगे थे। उस समय तक भवन–निर्माण, धातु–विज्ञान, वस्त्र–निर्माण, परिवहन–व्यवस्था आदि उन्नत दशा में विकसित हो चुके थे। फिर आर्यों के साथ भारत में विज्ञान की परंपरा और भी विकसित हो गई। इस काल में गणित, ज्योतिष, रसायन, खगोल, चिकित्सा, धातु आदि क्षेत्रों में विज्ञान ने खूब उन्नति की। विज्ञान की यह परंपरा ईसा के जन्म से लगभग 200वर्ष पूर्व से शुरू होकर ईसा के जन्म के बाद लगभग 11वीं सदी तक काफी उन्नत अवस्था में थी। इस बीच आर्यभट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, बोधायन, चरक, सुश्रुत, नागार्जुन, कणाद से लेकर सवाई जयसिंह तक वैज्ञानिकों की एक लंबी परंपरा विकसित हुई।

भारत में वैज्ञानिक अनुसंधानों और अविष्कारों की परंपरा आदिकाल से चली आ रही है। जिस समय यूरोप में घुमक्कड़ जनजातियाँ बस रही थीं उस समय सिंधु घाटी के लोग सुनियोजित नगर बसाकर रहते थे। मोहन जोदड़ो, हड़प्पा, काली बंगा, लोथल, चंहुदड़ों बनवाली, सुरकोटड़ा आदि स्थानों पर हुई खुदाई में मिले नगरों के खंडहर इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इन नगरों के भवन, सड़कें, नालियाँ, स्नानागार, कोठार आदि पक्की ईंटों से बने थे। यहाँ के निवासी जहाजों द्वारा विदेश से व्यापार करते थे। माप–तौल का ज्ञान उन्हें था। परिवहन के लिए बैलगाड़ी का उपयोग होता था। कृषि उन्नत अवस्था में थी। वे काँसे का उपयोग करते थे। काँसे के बने हथियार और औजार इसका प्रमाण है। सुनार सोने, चाँदी और बहुमूल्य रत्नों के आभूषण बनाते थे। इसका अर्थ यह हुआ कि ये लोग खनन विद्या में पारंगत थे। कठोर रत्नों को काटने, गढ़ने, छेद करने के लिए उनके पास उन्नत कोटि के उपकरण थे। ये लोग ऊनी और सूती वस्त्र बनाना जानते थे।

वैदिक काल के लोग खगोल विज्ञान का अच्छा ज्ञान रखते थे। वैदिक भारतीयों को 27नक्षत्रों का ज्ञान था। वे वर्ष, महीनों और दिनों के रूप में समय के विभाजन से परिचित थे। 'लगध' नाम के ऋषि ने 'ज्योतिष वेदांग' में तत्कालीन खगोलीय ज्ञान को व्यवस्थित कर दिया था।गणित और ज्यामिति का वैदिक युग में पर्याप्त विकास हुआ था। वैदिककालीन भारतीय तक गणना कर सकते थे। वैदिक युग की विशिष्ट उपलब्धि चिकित्सा के क्षेत्र में थी। मानव शरीर के सूक्ष्म अध्ययन के लिए वे शव विच्छेदन (पोस्ट मार्टम) प्रक्रिया का कुशलता से उपयोग करते थे। प्राकृतिक जड़ी–बूटियों और उनके औषधीय गुणों के बारे में लोगों को विशद ज्ञान था। तत्कालीन चिकित्सक स्नायुतंत्र और सुषुम्ना (रीढ़ की हड्डी) के महत्त्व से भली–भाँति परिचित थे।

मौसम–परिवर्तन शरीर, में सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति तथा रोग पैदा करने वाले आनुवांशिक कारकों आदि के सिद्धांतों को वहाँ से मान्यता प्राप्त थी। आयुर्वेद चिकित्सा–पद्धाति का बहुतायत में उपयोग होता था। आवश्यकता पड़ने पर शल्य–चिकित्सा भी की जाती थी। बाद में तो अरबों तथा यूनानियों ने भी शल्य–चिकित्सा को अपनाया। फिर तो रोम साम्राज्य में भारतीय जड़ी–बूटियों की भी माँग चिकित्सा के क्षेत्र में होने लगी। उसी समय वनस्पतियों और जंतुओं के बाह्य तथा आंतरिक संरचनाओं के अध्ययन भी किए गए। कृषि के क्षेत्र में मिट्टी की उवर्रता बढ़ाने के लिए फसल चक्र की पद्धति तब भी अपनाई जाती थी।

भारत में वैज्ञानिक प्रगति का स्वर्ण काल ईसा से पूर्व चौथी शताब्दी से लेकर ईसा के बाद छठी या सातवीं शताब्दी तक रहा। धातु–कर्म, भौतिकी, रसायन–शास्त्र जैसे विज्ञानों का विकास भी इस युग में हुआ था। मौर्यकाल में युद्ध के लिए अस्त्रों और शस्त्रों का विकास किया गया था। कुछ यांत्रिक अस्त्रों, जैसे – प्रक्षेपकों का विकास तथा सिंचाई में अभियांत्रिकी का उपयोग उल्लेखनीय है। इस काल में भू–सर्वेक्षण की तकनीक अत्यंत विकसित थी। विशालकाय प्रस्तर स्तंभों के निर्माण में अनेक प्रकार के वैज्ञानिक कौशलों का उपयोग इस युग की एक अन्य विशेषता है।गुप्तकाल में विज्ञान की सभी शाखाओं में उल्लेखनीय प्रगति हुई। बीज गणित, ज्यामिति, रसायन शास्त्र, भौतिकी, धातुशिल्प, चिकित्सा, खगोल विज्ञान का विकास चरम सीमा पर था। इस युग में अनेक ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक हुए जिनके अनुसंधानों और आविष्कारों का लोहा तत्कालीन सभ्य समाज के लोग मानते थे।

खगोल विज्ञानयह विज्ञान भारत में ही विकसित हुआ। प्रसिद्ध जर्मन खगोलविज्ञानी कॉपरनिकस से लगभग 1000 वर्ष पूर्व आर्यभट्ट ने पृथ्वी की गोल आकृति और इसके अपनी धुरी पर घूमने की पुष्टि कर दी थी। इसी तरह आइजक न्यूटन से 1000 वर्ष पूर्व ही ब्रह्मगुप्त ने पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त की पुष्टि कर दी थी। यह एक अलग बात है कि किन्हीं कारणों से इनका श्रेय पाश्चात्य वैज्ञानिकों को मिला।

पाँचवीं शताब्दी में आर्यभट्ट ने सर्वप्रथम लोगों को बताया कि पृथ्वी गोल है और यह अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है। उन्होंने पृथ्वी के आकार, गति और परिधि का अनुमान भी लगाया था। आर्यभट्ट ने सूर्य और चंद्र ग्रहण के सही कारणों का पता लगाया। उनके अनुसार चंद्रमा और पृथ्वी की परछाई पड़ने से ग्रहण लगता है। चंद्रमा में अपना प्रकाश नहीं है, वह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है। इसी प्रकार आर्यभट्ट ने राहु–केतु द्वारा सूर्य और चंद्र को ग्रस लेने के सिद्धान्त का खण्डन किया और ग्रहण का सही वैज्ञानिक सिद्धान्त प्रतिपादित किया। आर्यभट्ट ने 'आर्यभटीय' तथा 'आर्य सिद्धान्त' नामक ग्रन्थों की रचना की थी। आर्यभट्ट के बाद छठी शताब्दी में वराहमिहिर नाम के खगोल वैज्ञानिक हुए। विज्ञान के इतिहास में वे प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने

International Journal of Advances in Engineering and Management (IJAEM)
Volume 4, Issue 10 Oct. 2022, pp: 1197-1200 www.ijaem.net ISSN: 2395-5252

कहा कि कोई ऐसी शक्ति है, जो वस्तुओं को धरातल से बाँधे रखती है। आज इसी शक्ति को गुरुत्वाकर्षण कहते हैं। वराहमिहिर का कहना था कि पृथ्वी गोल है, जिसके धरातल पर पहाड़, नदियाँ, पेड़–पौधो, नगर आदि फैले हुए हैं। 'पंचसिद्धान्तिका' और 'सूर्यसिद्धान्त' उनकी खगोल विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें हैं। इनके अतिरिक्त वराहमिहिर ने 'वृहत्संहिता' और 'वृहज्जातक' नाम की पुस्तकें भी लिखी हैं।

भारतीय खगोल विज्ञान में ब्रह्मगुप्त का भी काफी महत्त्वपूर्ण योगदान है। इनका कार्यकाल सातवीं शताब्दी से माना जाता है। वे खगोल विज्ञान संबंध गणनाओं में संभवतः बीजगणित का प्रयोग करने वाले भारत के सबसे पहले महान गणितज्ञ थे। 'ब्रह्मगुप्त सिद्धान्त' इनका प्रमुख ग्रंथ है। इसके अतिरिक्त जीवन के अंतिम वर्षों में ब्रह्मगुप्त ने 'खण्ड खाद्यक' नामक ग्रन्थ भी लिखा था। इन्होंने विभिन्न ग्रहों की गति और स्थिति, उनके उदय और अस्त, युति तथा सूर्य ग्रहण की गणना करने की विधियों का वर्णन किया है। ब्रह्मगुप्त का ग्रहों का ज्ञान प्रत्यक्ष वेध (अवलोकन) पर आधारित था। इनका मानना था कि जब कभी गणना और वेध में अन्तर पड़ने लगे तो वेध के द्वारा गणना शुद्ध कर लेनी चाहिए। ये पृथ्वी को गोल मानते थे तथा पुराणों में पृथ्वी को चपटी मानने के विचार की इन्होंने कड़ी आलोचना की है। ब्रह्मगुप्त आर्यभट्ट के अनेक सिद्धान्तों के साथ पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के सिद्धान्त के भी आलोचक थे। ब्रह्मगुप्त पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के सिद्धान्त से सहमत थे। उनके अनुसार 'वस्तुएँ पृथ्वी की ओर गिरती हैं क्योंकि पृथ्वी की प्रकृति है कि वह उन्हें अपनी ओर आकर्षित करे।'

ब्रह्मगुप्त के बाद खगोल विज्ञान में भास्कराचार्य का विशिष्ट योगदान है। इनका समय बारहवीं शताब्दी था। वे गणित के प्रकाण्ड पण्डित थे। इन्होंने 'सिद्धान्तशिरोमणि' और 'करण कुतुहल' नामक दो ग्रन्थों की रचना की थी। खगोलविद् के रूप में भास्कराचार्य अपनी 'तात्कालिक गति' की अवधरणा के लिए प्रसिद्ध हैं। इससे खगोल वैज्ञानिकों को ग्रहों की गति का सही ज्ञान प्राप्त करने में मदद मिलती है।

भास्कर ने एक तो गोले की सतह और उसके घनफल को निकालने के जर्मन ज्योतिर्विद केपलर के नियम का पूर्वाभ्यास कर लिया था। दूसरे उन्होंने सत्रहवीं शताब्दी में जन्मे आइजैक न्यूटन से लगभग 500 वर्ष पूर्व गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का प्रतिपादन किया थागणितअधिकतर खोज और अविष्कार जिन पर आज यूरोप को इतना गर्व है, एक विकसित गणितीय पद्धति के बिना असंभव थे। यह पद्धति भी संभव नहीं हो पाती यदि यूरोप भारी–भरकम रोमन अंकों के बंधन में जकड़ा रहता। नई पद्धति को खोज निकालने वाला वह अज्ञात व्यक्ति भारत का पुत्र था। मध्ययुगीन भारतीय गणितज्ञों, जैसे ब्रह्मगुप्त (सातवीं शताब्दी), महावीर (नवीं शताब्दी) और भास्कर (बारहवीं शताब्दी) ने ऐसी कई खोजे कीं, जिनसे पुनर्जागरण काल या उसके बाद तक भी यूरोप अपरिचित था। इसमें कोई मतभेद नहीं कि भारत में गणित की उच्चकोटि की परंपरा थी।

अंकगणित हड़प्पाकालीन संस्कृति के लोग अवश्य ही अंकों और संख्याओं से परिचित रहे होंगे। इस युग की लिपि के अब तक न पढ़े जा सकने के कारण निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन भवन, सड़कों, नालियों, स्नानागारों आदि के निर्माण में अंकों और संख्याओं का निश्चित रूप से उपयोग हुआ होगा। माप–तौल और व्यापार क्या बिना अंकों और संख्याओं के संभव था? हड़प्पाकालीन संस्कृति की लिपि के पढ़े जाने के बाद निश्चित ही अनेक नए तथ्य उद्घाटित होंगे। इसके बाद वैदिककालीन भारतीय अंकों और संख्याओं का उपयोग करते थे। वैदिक युग के एक ऋषि मेघातिथि 1012 तक की बड़ी संख्याओं से परिचित थे। वे अपनी गणनाओं में दस और इसके गुणकों का उपयोग करते थे। 'यजुर्वेद संहिता' अध्याय 17, मंत्र 2 में 10,00,00,00,00,000 (एक पर बारह शून्य, दस खरब) तक की संख्या का उल्लेख है। ईसा से 100 वर्ष पूर्व का जैन ग्रन्थ 'अनुयोग द्वार सूत्र' है। इसमें असंख्य तक गणना की गई है, जिसका परिमाण 10140 के बराबर है। उस समय यूनान में बड़ी–से–बड़ी संख्या का नाम 'मिरियड' था, जो 10,000 (दस सहस्र) थे और रोम के लोगों की बड़ी–से–बड़ी संख्या का नाम मिल्ली था, जो 1000 (सहस्र) थी। शून्य का उपयोग पिंगल ने अपने छन्दसूत्र में ईसा के 200 वर्ष पूर्व किया था। इसके बाद तो शून्य का उपयोग अनेक ग्रंथों में किया गया है।

ब्रह्मगुप्त (छठी शताब्दी) पहले भारतीय गणितज्ञ थे जिन्होंने शून्य को प्रयोग में लाने के नियम बनाए। शून्य को किसी संख्या से घटाने या उसमें जोड़ने पर उस संख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।शून्य से किसी संख्या का गुणनफल भी शून्य होता है।किसी संख्या को शून्य से विभाजित करने पर उसका परिणाम अनंत होता है। शून्य से विभाजित करो तो परिणाम शून्य होता हैयह अनन्त की संख्या होती है। यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो गया है कि संसार को संख्याएँ लिखने की आधुनिक प्रणाली भारत ने ही दी है।ज्यामितिज्यामिति का ज्ञान हड़प्पाकालीन संस्कृति के लोगों को भी था। ईंटों की आकृति, भवनों की आकृति, सड़कों का समकोण पर काटना इस बात का द्योतक है कि उस काल के लोगों को ज्यामिति का ज्ञान था।

वैदिक काल में आर्य यज्ञ की वेदियों को बनाने के लिए ज्यामिति के ज्ञान का उपयोग करते थे। 'शुल्बसूत्र' में वर्ग और आयत बनाने की विधि दी हुई है। भुजा के संबंध को लेकर वर्ग के समान आयत, वर्ग के समान वृत्त आदि प्रश्नों पर इस ग्रंथ में विचार किया गया है। किसी त्रिकोण के बराबर वर्ग खींच ऐसा वर्ग बनाना जो किसी वर्ग का दो गुणा, तीन गुणा अथवा एक तिहाई हो, ऐसा वर्ग बनाना, जिसका क्षेत्रफल उपस्थित वर्ग के क्षेत्र के बराबर हो, इत्यादि की रीतियाँ भी 'शुल्ब सूत्र' में दी गई हैं।आर्यभट्ट ने वृत्त की परिधि और व्यास के अनुपात (पाई π) का मान 3.1416 स्थापित किया है। उन्होंने पहली बार कहा कि यह पाई का सन्निकट मान है।

त्रिकोणमिति के क्षेत्र में भारतीयों ने जो काम किया, वह अनुपमेय और मौलिक है। इन्होंने ज्या, कोटिज्या और उत्क्रमज्या का आविष्कार किया। वराहमिहिर कृत 'सूर्य सिद्धान्त' (छठी शताब्दी) में त्रिकोणमिति का जो विवरण है, उसका ज्ञान यूरोप को ब्रिग्स के द्वारा सोलहवीं शताब्दी में मिला। ब्रह्मगुप्त (सातवीं शताब्दी) ने भी त्रिकोणमिति पर लिखा है और एक ज्या सारणी भी दी है।

बीजगणित भारतीयों ने बीजगणित में भी बड़ी दक्षता प्राप्त की थी। आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य, श्रीधराचार्य आदि प्रसिद्ध गणितज्ञ थे। बीजगणित के क्षेत्र में सबसे बड़ी उपलब्धि है – 'अनिवार्य वर्ग समीकरण का हल प्रस्तुत करना'। पाश्चात्य गणित के इतिहास में इस समीकरण के हल का श्रेय 'जॉन पेल' (1688 ई.) को दिया जाता है और इसे 'पेल समीकरण' के नाम से ही जाना जाता है, परंतु वास्तविकता यह है कि पेल से एक हजार वर्ष पूर्व ब्रह्मगुप्त ने इस समीकरण का हल प्रस्तुत कर दिया था। इसके लिए ब्रह्मगुप्त ने दो प्रमेयकाओं की खोज की थी। अनिवार्य वर्ग समीकरण के लिए भारतीय नाम वर्ग–प्रकृति है।

चिकित्साभारत में चिकित्सा विज्ञान की सुदीर्घ परंपरा है। चिकित्सा शास्त्र को वेद तुल्य सम्मान दिया गया है। यही कारण है कि भारतीय चिकित्सा पद्धति को आयुर्वेद की संज्ञा से अभिनिहित किया जाता है। भारतीय चिकित्सा पद्धति के विषय में सर्वप्रथम लिखित ज्ञान 'अथर्ववेद' में मिलता है। अथर्ववेद में विविध रोगों के उपचारार्थ प्रयोग किए जाने संबंध भैषज्य सूत्र संकलित हैं। इन सूत्रों में विभिन्न रोगों के नाम तथा उनके निराकरण के लिए विभिन्न प्रकार की औषधियों के नाम भी दिए गए हैं। जल चिकित्सा, सूर्य किरण चिकित्सा और मानसिक चिकित्सा के विषयों पर इसमें विस्तृत विवरण मिलता है। अथर्ववेद के बाद ईसा से लगभग 600 वर्ष पूर्व काय चिकित्सा पर 'चरकसंहिता' और शल्य चिकित्सा पर 'सुश्रुत संहिता' मिलती हैं। ये चिकित्सा शास्त्र के प्रामाणिक और विश्वविख्यात ग्रंथ हैं।

चरक संहितामहर्षि चरक को काय चिकित्सा का प्रथम ग्रंथ लिखने का श्रेय दिया जाता है। 'चरक संहिता' को औषधीय

International Journal of Advances in Engineering and Management (IJAEM)
Volume 4, Issue 10 Oct. 2022, pp: 1197-1200 www.ijaem.net ISSN: 2395-5252

शास्त्र में आयुर्वेद पद्धति का आधर माना जाता है। आयुर्वेद का अर्थ है 'जीवन का शास्त्र'।चरक संभवतः इस बात को जानते थे कि शरीर में हृदय एक मुख्य अवयव है। उन्हें शरीर में रक्त संचार क्रिया का भी ज्ञान था। वे यह भी जानते थे कि कुछ बीमारियाँ ऐसे कीटाणुओं के कारण होती हैं जिन्हें हम अपनी आँखों से सीधे नहीं देख सकते। 'चरक संहिता' तत्कालीन प्रशिक्षित चिकित्सकों और चिकित्सालयों का भी विवरण मिलता है। चरक पहले चिकित्सक थे, जिन्होंने चयापचय, पाचन और शरीर प्रतिरक्षा के बारे में बताया। 'चरक संहिता' में शरीर विज्ञान, निदान शास्त्र और भ्रूण विज्ञान के विषय में जानकारी मिलती है। चरक को आनुवांशिकी के मूल सिद्धान्तों का भी ज्ञान था। उन्हें उन कारणों का पता था जिससे बच्चे का लिंग निश्चित होता है। 'चरक संहिता' का अनुवाद अनेक विदेशी भाषाओं में हुआ है।

सुश्रुत संहितासुश्रुत रचित यह ग्रंथ भारतीय शल्य चिकित्सा पद्धति का विश्वविख्यात ग्रंथ है। इस संहिता में सुश्रुत ने अपने से पहले के शल्य चिकित्सकों के ज्ञान और अनुभवों को संकलित कर एक व्यवस्थित रूप दिया है। अपनी संहिता में उन्होंने लिखा है कि चिकित्सा विज्ञान के विद्यार्थी मृत शरीर के विच्छेदन से अपने कार्य में कुशल बनते हैं। सुश्रुत के अनुसार शव विच्छेदन एक प्रक्रिया है। सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा के लिए 101 उपकरणों की सूची भी दी है। उनका कहना था कि इनके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार स्वयं भी उपकरण तैयार करने चाहिए। उनकी सूची में चिमटियाँ, चाकू, सूइयाँ, सलाइयाँ तथा नलिका आकृति के वे सब उपकरण हैं जिनका प्रयोग आज का शल्य चिकित्सक करता है। शल्य चिकित्सा से पहले उपकरणों को गर्म करके कीटाणु रहित करने की बात भी उन्होंने कही है। सुश्रुत भूज नलिका में पाए जाने वाले पत्थर निकालने में, टूटी हड्डियों को जोड़ने और मोतियाबिंद की शल्य चिकित्सा में बहुत दक्ष थे।

सुश्रुत को पूरे संसार में आज प्लास्टिक सर्जरी का जनक कहा जाता है। सुश्रुत संहिता में नाक, कान और ओंठ की प्लास्टिक सर्जरी का पूरा विवरण दिया गया है। चरक और सुश्रुत की ही परंपराओं को अनेक सुप्रसिद्ध चिकित्सकों ने आगे बढ़ाया। महर्षि अजेय ने नाड़ी और श्वास की गति पर प्रकाश डाला। महर्षि पतंजलि ने योग से शरीर को नीरोग रखने के उपाय बताए। आधुनिक चिकित्सक भी अब हृदय के रोगों के लिए योग का सहारा लेते हैं। आचार्य जीवक भगवान बुद्ध के चिकित्सक थे। उन्होंने अनेक असाध्य रोगों की चिकित्सा की विधियाँ बताई हैं। वृद्धजय में गिने जाने वाले वाग्भट्ट ने 'अष्टांग संग्रह' और 'अष्टांगहृदय संहिता' की रचना की थी। इनमें आयुर्वेद का संपूर्ण ज्ञान समाहित हो गया है। माधवाकर रोग निदान और रोग लक्षणों पर प्रकाश डालने वाले पहले आचार्य थे।

'चरक संहिता' के संपादक दृढ़बल तथा 'भावप्रकाश' के लेखक भावमिश्र चिकित्सा जगत के महान आचार्य थे। पशु चिकित्साभारत में पशुचिकित्सा विज्ञान भी काफी विकसित था। घोड़ों, हाथियों, गाय–बैलों की चिकित्सा से संबंधित अनेक ग्रंथ उपलब्ध हैं। 'शालिहोत्र' नामक पशु चिकित्सक के 'हय आयुर्वेद', 'अश्व लक्षण शास्त्र' तथा 'अश्व प्रशंसा' नाम के तीन ग्रंथ उपलब्ध हैं। इनमें घोड़ों के रोगों और उनके उपचार के लिए औषधियों का विवरण है। इन ग्रंथों के अनुवाद अनेक विदेशी भाषाओं में हुए। पालकप्य के 'हास्ते–आयुर्वेद' में हाथियों की शरीर रचना तथा उनके रोगों का विवरण, उनके रोगों की शल्य क्रिया और औषधियों द्वारा चिकित्सा, देखभाल और आहार का विवरण चरक और सुश्रुत की संहिताओं में भी मिलता है।भौतिकीप्राचीन काल में भारत में अन्य विज्ञानों के साथ–साथ भौतिकी का भी प्रचलन था। कणाद ऋषि ने छठी शताब्दी ईसा पूर्व ही इस बात को सिद्ध कर दिया था कि विश्व का हर पदार्थ परमाणुओं से मिलकर बना है। उन्होंने परमाणुओं की संरचना, प्रवृत्ति तथा प्रकारों की चर्चा की हैरसायन विज्ञानभारत में रसायन विज्ञान की भी बहुत पुरानी परंपरा है।

प्राचीन में संस्कृत भाषा में लिखित रसायन विज्ञान के 44 ग्रंथ उपलब्ध हैं। नागार्जुन (दसवीं शताब्दी) ने रसायन विज्ञान पर 'रसरत्नाकर' नामक ग्रंथ लिखा है। इस ग्रंथ में पारे के यौगिक बनाने के प्रयोग दिए गए हैं। चाँदी, सोना, टिन और ताँबे के अयस्क भूगर्भ से निकालने और उन्हें शुद्ध करने की विधियों का विवरण भी दिया गया है। नागार्जुन पारे से संजीवनी बनाने के लिए पशुओं और वनस्पति के तत्त्वों तथा अम्ल और खनिजों का उपयोग करते थे। वनस्पति निर्मित तेजाबों में वे हीरे, धातु और मोती गला लेते थे। नागार्जुन ने रसायन विज्ञान में काम आने वाले उपकरणों का विवरण भी दिया है। इस ग्रंथ में आसवन, द्रवण, उर्ध्वपातन और भूनने का भी वर्णन है। नागार्जुन के अतिरिक्त भारत के महान रसायन शास्त्र वृंद का नाम भी उल्लेखनीय है। इन्होंने औषधि रसायन पर 'सिद्ध योग' नामक ग्रंथ की रचना की है। इसमें विभिन्न रोगों के उपचार के लिए धातुओं के मिश्रण का विवरण दिया गया है। भारत में रसायन शास्त्रियों ने पहली और दूसरी शताब्दी तक ही कई रासायनिक फॉर्मूले खोज लिए थे। पारद (पारा) के यौगिक, अकार्बनिक लवण तथा मिश्र धातुओं का प्रयोग और मसालों से कई प्रकार के इत्र बनाए जाते थे।

धातु विज्ञानभारत में हड़प्पा कालीन संस्कृति के समय से ही अनेक धातुओं का उपयोग होता आ रहा है। धातुओं को प्राप्त करने के लिए कई विज्ञानों का सहारा लेना पड़ता है। धातुओं के अयस्कों की खोज के लिए भूविज्ञान में दक्षता अनिवार्य है। अयस्कों से धातु निकालने तथा उन्हें मिश्रित धातु बनाने के लिए रसायन विज्ञान और धातु विज्ञान की दक्षता अपेक्षित है। भारत को प्राचीन काल से ही इन सभी विज्ञानों में दक्षता प्राप्त है। धातु विज्ञान में भारत की दक्षता उच्च कोटि की थी। ईसा पूर्व 326 ई. में पोरस ने 30पौंड वजन का भारतीय इस्पात सिकंदर को भेंट में दिया। एक राजा दूसरे राजा को अनुपमेय, दुर्लभ और अतिविशिष्ट वस्तुएँ ही भेंट किया करते थे। भारतीय इस्पात ऐसी ही अति विशिष्ट वस्तु थी। उस काल में भारतीय इस्पात इतनी उच्चकोटि का होता था कि विशेष प्रकार के औजार और अस्त्र–शस्त्र बनाने के लिए तत्कालीन सभ्य देशों में उसकी बहुत माँग थी।

लौह स्तंभ 7.5 मीटर ऊँचा एक प्राचीन लौह स्तंभ कर्नाटक की पर्वत शृंखलाओं में खड़ा है। इस पर भी जंग का कोई प्रभाव नहीं हुआ है। यही नहीं उड़ीसा के कोणार्क मंदिर (तेरहवीं शताब्दी) में लगभग 10.5 मीटर लंबा तथा 90 टन के भार वाला लोहे का स्तंभ भी आज तक जंगविहीन है। यही नहीं इतने भारी स्तंभ को ढालकर बनाना ही भारत की विस्मयकारी उपलब्धि है। लोहा ही नहीं सोना, चांदी, ताँबा, टिन, जस्ता जैसी अनेक धातुओं के अयस्क खोजने तथा उन्हें गलाकर शुद्ध धातु प्राप्त करने में भारतीय वैज्ञानिकों को महारत हासिल थी। अनेक धातुओं की तो वे भस्म बनाकर औषधि के रूप में प्रयोग करते हैं।रत्न विज्ञानभारत का रत्न विज्ञान भी उच्चकोटि का था।

भारतीयों को वज्र (हीरा), मरफत, पद्मराग, मुक्ता, महानील, इंद्रनील, वैदर्य, ग्रंथशस्य, चंद्रकांत, सूर्यकांत, स्फटिक, पुलक, कर्केतन, पुष्पराग, ज्योतिरस, राज पट्ट, राजमय, सौगंधिक, जंज, शंख, गोमेद, रुधिराक्ष, भल्लातक धली, तथक, सीस, पीलू, प्रवाल, गिरिवज्र, भुजंगमणि, वज्रमणि, हिट्टिभ, पिंड़, भ्रामर, उत्पल आदि रत्नों का ज्ञान था। इन रत्नों को भूमि या जल से निकालना, उन्हें आभूषणों में जड़े जाने योग्य बनाना, हमारे विज्ञान और अभियंत्रिकी दोनों का ही कमाल था। हीरा संसार में कठोरतम पदार्थ है। इसे काटने के लिए उपकरण भी प्राचीन काल में भारतीयों ने विकसित किए थे। वस्त्र निर्माण में भारत ने असाधारण दक्षता प्राप्त की थी। शताब्दियों पहले भारत में कपड़े रंगने के लिए 100 से अधिक वनस्पति और खनिजों से प्राप्त रंगों का उपयोग होता था। विज्ञान की अन्य अनेक शाखाओं में भारत की उच्चकोटि की उपलब्धियाँ थीं।

सारांश

भारतीय खगोल विज्ञान का उद्भव वेदों से माना जाता है। वैदिककालीन भारतीय धर्मप्राण व्यक्ति थे। वे अपने यज्ञ तथा अन्य धार्मिक अनुष्ठान ग्रहों की स्थिति के अनुसार शुभ लग्न देखकर किया करते थे। शुभ लग्न जानने के लिए उन्होंने खगोल विज्ञान का विकास किया था। वैदिक आर्य सूर्य की उत्तरायण और

दक्षिणायन गति से परिचित थे। वैदिककालीन खगोल विज्ञान का एक मात्र ग्रंथ 'वेदांग ज्योतिष' है। इसकी रचना 'लगध' नामक ऋषि ने ईसा से लगभग 100 वर्ष पूर्व की थी। महाभारत में भी खगोल विज्ञान से संबंधित जानकारी मिलती है। महाभारत में चंद्रग्रहण और सूर्यग्रहण की चर्चा है। इस काल के लोगों को ज्ञात था कि ग्रहण केवल अमावस्या और पूर्णिमा को ही लग सकते हैं। इस काल के लोगों का ग्रहों के विषय में भी अच्छा ज्ञान था। 'वेदांग ज्योतिष' के बाद लगभग एक हजार वर्षों तक खगोल विज्ञान का कोई ग्रंथ नहीं मिलता।

आज विज्ञान का स्वरूप अत्यधिक विकसित हो चुका है। पूरी दुनिया में तेजी से वैज्ञानिक खोजें हो रही हैं। इन आधुनिक वैज्ञानिक खोजों की दौड़ में भारत के जगदीश चन्द्र बसु, प्रफुल्ल चन्द्र राय, सी वी रमण, सत्येन्द्रनाथ बोस, मेघनाद साहा, प्रशान्त चन्द्र महलनोबिस, श्रीनिवास रामानुजन्, हरगोविन्द खुराना आदि का वनस्पति, भौतिकी, गणित, रसायन, यांत्रिकी, चिकित्सा विज्ञान, खगोल विज्ञान आदि क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान ळें

REFERENCES

[1]. Benjamin, Joseph, Scheduled custom in Indian Politics and society, New Delhi, 1989.
[2]. Chandra, Bipin, Nationalism and Colonialism in Modern India, New Delhi, 1979.
[3]. Dainik Bhaskar Newspaper, Indian idea of Political resistance,1990.
[4]. Gandhi, M. K., An Autobiography, The story of my experiments with truth, Ahmedabad 1949.
[5]. Gandhi, Raj Mohan, At lives: A study of Hindu-Muslim Encounter, Roli Books International, New Delhi 1949.
[6]. Dunning, W A., A History of Political theories, Allahabad 1970.
[7]. Hansen, Thomas Blum, The sophron wave: Democracy and Hindu nationalism in Modern India,Oxford Uni. Press, New Delhi, 1999.
[8]. Times of India Newspaper, The social contest of an Ideology, New Delhi 1993.
[9]. Jha, M. N., Modern Indian Political Thought, Meerut 1975.
[10]. Bhamri, C.P., Politics in India, New Delhi 1988.
[11]. Chandra, Bipin, Indian Left: Critical appraisal, New Delhi 1983.
[12]. Chandra, Bipin, It, All, 1988, India's struggle for Independence: 1947., New Delhi.
[13]. Chandra, Bipin, It, All, India's struggle for Independence, New Delhi 1988.
[14]. Chang, S.H.M., Markesan theory of the state, Delhi 1990.
[15]. Kohen, A. P., The symbolic construction of community, London 1985.
[16]. Dasgupta, Swapna, "Adivasi Politics 1924-1932" Ranjeet Guha, Subaltern studies, Vol. 4, Delhi 1985.
[17]. Desai, A.R., Social Background of Indian Nationalism, Mumbai 1986.
[18]. Hindustan Times Newspaper, Nationalism and communal Politics in India, NewDelhi Aug 03, 2021.
[19]. Ghosh, Shankar, Modern Indian Political thought, New Delhi 1984.
[20]. Aiyar, RN., The moral and Political thoughts of Mahatma Gandhi, New Delhi 1973.
[21]. Johns, Canth W, Religious movement in India, Oxford Uni. Press, Delhi, 1987.
[22]. Comble, J. R., Rise and Awakening of Depressed classes in India, New Delhi 1979.